Practical Form of Caste and Religion in Indian Democracy

(भारतीय लोकतंत्र में जाति और धर्म का व्यवहारिक रूप)

Dr. Shilpa Jain,
Assistant Professor, Department of History,
Gangasheel College, Faizullapur,
Nawabganj, Bareilly,U.P. India

DOI: 10.52984/ijomrc1308

Abstract:

लोकतंत्र शासन का एक ऐसा स्वरूप है जिसमें सर्वोच्च सत्ता जनता में निहित रहती है और जनता इस सत्ता का प्रयोग नियमित अन्तराल में होने वाले स्वतन्त्र निर्वाचनों मे एक प्रतिनिधित्व प्रणाली के माध्यम से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से करती है। किसी शासन व्यवस्था को प्रामाणिक एवं व्यापक लोकतंत्र या सफलतापूर्वक क्रियाशील लोकतंत्र तभी कहा जा सकता है जब सच्चा लोकतंत्र किसी भी देश विशेष की जनता की आशा–आकांक्षाओं को पूरा करने से ही अपना सही मार्ग ढूंढ सकता है अपनी एक सही व्यवस्था की खोज कर सकता है भारतीय लोकतंत्र ने इनमें से अनेक आवश्यक शर्तो को पिछले कई वर्षो में पूरा किया है लेकिन इसे अनेक चुनौतियों का सामना भी करना पड़ रहा है जिसमें जाति, धर्म साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार, धार्मिक कट्टरवाद आदि है जिनका सामना करने की आज भी जरूरत है।

भारतीय लोकतंत्र की चुनौतियों का सामना करने के लिए कुछ ऐसे सुधारात्मक उपाय करने की जरूरत है जो सार्वभौम हो, अर्थात सबके लिए हो, लेकिन लोकतंत्र तभी सफल हो सकता है जब इसके नागरिक अपने चिन्तन तथा व्यवहार में समानता, स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय, उत्तरदायित्व एवं सबके लिए आदर जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों को आत्मसात करेंगें। इसके साथ ही सफल लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि नागरिकों को धर्म, जाति, साम्प्रादियकता से ऊपर आना होगा तथा धर्म निरपेक्षता को बढ़ावा देना होगा एवं लोकतंत्र के लक्ष्यों को मूर्त रूप देने के लिए अग्रणी भूमिका भी निभानी जरूरी है। लेकिन वर्तमान दौर में भारतीय लोकतंत्र गम्भीर चुनौतियाँ एवं जातिवाद, साम्प्रदायिकता एवं धार्मिक कट्टरवाद का सामना कर रहा है। यही तत्व लोकतंत्र प्रणाली की कार्यशीलता एवं स्थिरता को कमजोर करते हैं अनुमान लगाया जाता है कि जाति व्यवस्था का अभ्युदय प्राचीन समाज में श्रम विभाजन के संदर्भ में हुआ था जो धीरे–धीरे जन्म पर आधारित कठोर–समूह वर्गीकरण में परिवर्तित हो गया। दिन प्रतिदिन इस व्यवस्था का स्वरूप जाटिल होता चला गया और सच यह है कि जातिवाद ही सामाजिक–आर्थिक असमानता को कायम रखने हेतु उत्तरदायी है। हमारे समाज की जाति आधारित असमानता भारतीय लोकतंत्र के लिए एक गम्भीर चुनौती बनी हुई है। जाति एवं राजनीति के मिश्रण से जातियों का राजनीतिकरण एक अति गंभीर स्थिति है एवं वर्तमान भारतीय राजनीति में जातिवादकरण से हमारे लोकतंत्र में गम्भीर चुनौतियां उत्पन्न हो गई है। वर्तमान उदारीकरण एवं भूमड़लीकरण के युग के बावजूद जातिगत चेतना हमारे समाज से कम नहीं हुई है और जातियों को अधिकांशतः वोट बैंक राजनीति के रूप में उपयोग किया जा रहा है।

धार्मिक कट्टरवाद भी साम्प्रदायिक ताकतों को धर्म एवं राजनीति दोनों का शोषण करने को बढ़ावा देता है। वास्तव में धर्म कट्टरवाद एक विचारधारा की तरह कार्य करती है जो रूढ़िवादिता की वकालत करती है ये धर्म हमारे बहुधर्मी समाज में हमारे सह असितत्व के ढांचे को तोड़ रहा है और यह एक पंथ निरपेक्ष संस्कृति के विकास के मार्ग में बड़ा बाधक है यह धार्मिक कट्टरता एवं साम्प्रदायिकता हमारे लोकतांत्रिक राजनीतिक स्थायित्व के लिए खतरा एवं मानवीय एवं मिश्रित संस्कृति की यशस्वी परम्परा को बर्वाद कर रहा है।

अतः निष्कर्ष के रूप में हम यह सकते है कि भारतीय लोकतंत्र को ये सभी तत्व खोखला कर देंगे क्योंकि भारतीय समाज जातिगत–भेदभाव, धर्मबंधन से इस कदर जकड़ा हुआ है कि ना केवल समाज के बीच खाई पैदा हो रही है बल्कि यह तत्व राष्ट्रीय एकता के मार्ग में भी बाधा पहुंचाने का कार्य कर रही है।

प्रसिद्ध समाजशास्त्री एम.एन. श्रीनिवास का मत है कि ''परंपरावादी जाति व्यवस्था ने प्रगतिशील और आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था को इस प्रकार प्रभावित किया है कि ये राजनीतिक संस्थायें अपने मूलरूप में कार्य करने में समर्थ नहीं है।''

वास्तव में धर्म एवं जातिवाद भारतीय लोकतंत्र में बाधक सिद्ध प्रतीत हो रही है। अतः आवश्यक है धर्म निरपेक्ष राज्य ही लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना को सफल बना सकती है। इसके लिए देश के बुद्धिजीवी और राजनैतिक नेता इस संदर्भ में ईमानदारी के साथ सोचे और इस समस्या एवं इससे उत्पन्न अन्य समस्याओं का समाधान करने हेतु गंभीरतापूर्वक प्रयास करें। वैसे भी लोकतंत्र व्यक्ति की इकाई को मानता है ना कि जाति या समूह को, जाति, धर्म, और समूह के आतंक से मुक्त रखना ही लोकतंत्र का आग्रह है।

शब्द संकेतः ***लोकतंत्र, जाति-धर्म, साम्प्रदायिकता, धर्म निरपेक्षता, भ्रष्टाचार, धार्मिक कट्टरतावाद, राजनीति।***

किसी भी देश के लिये अपनी लोकतांत्रिक भावनाओं को स्थापित करना आवश्यक है, सच्चा लोकतंत्र किसी भी देश विशेष की जनता की आशा–आकांक्षाओं को पूरा करने से ही अपना सही मार्ग ढूंढ सकता है। अपनी एक सही व्यवस्था की खोज कर सकता है। दूसरे विकसित देशों के लोकतंत्र का अनुकरण करने से देश के लोकतंत्र का ढाँचा खड़ा नहीं किया जा सकता। अपने देश के समाज की पहचान करके यहाँ की जनता की विभिन्नताओं में छिपे हुये शोषण के सूत्रों को ढूंढकर निजी लोकतंत्र शासन व्यवस्था बनाई जा सकती है। किसी अन्य देश की शासन पद्धति का अनुकरण कर सच्चा लोकतांत्रिक शासन स्थापित नहीं किया जा सकता। क्योंकि लोकतंत्र एक परम्परा है, जो निरन्तर अभ्यास और कठिन प्रयास के फलस्वरूप प्राप्त की जाती है और उसी के अनुसार जनता में भावनाओं का विकास होता है।

हमारा समाज जब अनेक धर्मों व जातियों के भेदभाव से ग्रसित हो जाता है, जिसके कारण काल, अर्थ, जाति, धर्म के आधार पर हर व्यक्ति अपने आपको श्रेष्ठ सिद्ध करने की चेष्ठा करता है और विशेष स्वार्थों की सिद्धि की मनोवृत्ति का विकास करता है तब ऐसे समाज में लोकतंत्र के आधार पर उसके जीवन–यापन का क्या रूप हो, ऐसा निर्धारित करने के लिये सजग रहना पड़ता है। लोकतंत्र पर विचार करते हुए यह न भूलना चाहिये कि उस देश की जनता कई जातियों में बंटी हुई। एक जाति दूसरी जाति का कैसा शोषण करती है, इसके सूत्र सब जगह कैसे हुए हैं, यहाँ विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं, सबकी अपनी सांस्कृतिक अपेक्षाऐं होती हैं, जब हम जनता में लोकतंत्र का एक आदर्श रूप स्थापित करना चाहते हैं तब उन आदर्शों का निर्माण ऐसा होना चाहिये, जिससे हमारा जीवन व्यापार और हमारा व्यवहार सुचारू रूप से चल सके, हमारी चेतना का विकास हो, समाज में सदाव्यवहार करते हुये हम अपनी सद्भावना का विकास कर सकें, वहीं पद्धति लोकतांत्रिक होगी और सफलता के आदर्श को प्राप्त कर सकेगी।

लोकतंत्र, स्वतंत्रता, धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्र आदि राजनैतिक प्रत्ययों का व्यवहारिक प्रयोग वैदिक काल से ही निरन्तर होता रहा है। वैदिक काल को लेकर आज तक राजनीति और लोकतंत्र की पृष्ठभूमि में विचारों की गवेष्णा बेहद महत्वूपर्ण रही है, जो कि मानवतावादी मूल्यों की वकालत करती है, लेकिन बिडम्बना यह है कि वर्तमान लोकतंत्र का आधार लोकतंत्र की समष्टि की अवधारणा से विरक्त हो चुका है लोकतंत्र की रक्षा के उदात्त मूल्यों की उपेक्षा की जा रही है। गाँधी जी ने अपने विचारों को हरिजन लिखा है ''लोकतंन्त्र के बारे में मेरी कल्पना यह है कि उसके अन्दर बलवान से बलवान को जो अवसर होते हैं वे कमजोर से कमजोर के लिये भी हों, हिंसा में यह कमी भी संभव नहीं हो सकता'' अहिंसक लोकतंत्र या रामराज्य की कल्पना करें, गाँधी जी ने अपने इन्हीं उद्गारों को यंग इण्डिया के प्रकाशनों में भी व्यक्त किया था। लेकिन आज क्या हो रहा है? सिर्फ भ्रष्टाचार, अनाचार और हिंसा। आज मानव का उद्देश्य सिर्फ येन–केन प्रकारेण सत्ता हस्तगत करना रह गया है वह भी किसी नैतिक और राजनैतिक योग्यता के ऐसे में समष्तिवादी अवधारणा का पतन स्वभाविक है, प्रश्न यह है कि क्या सिर्फ निहित स्वार्थ मानव कल्याण का शाश्वत साधन है? अगर नहीं तो हमें पुनः वैदिक मनीषियों के चिन्तन से लेकर आधुनिक राजनीति के विद्वानों के विचारों से राजनीति और लोकतन्त्र के उन आदर्शों की खोज करनी ही होगी, जिससे कि लोकतंत्र के सर्व कल्याणकारी नैतिक मूल्यों को पुनः स्थापित किया जा सके, फलस्वरूप आधुनिक काल की राजनीति में जन समस्याओं के समाधान का आधार केवल भौतिक या बौद्धिक न होकर वैदिक काल की तरह परमार्थिक भी हो सके, जैसा कि लोकतंत्र के बारे में आम अवधारणा है कि लोकतंत्र मनुष्य में निहित आध्यात्मिक भावनाओं का ही राजनैतिक संस्करण है, भारत के मूल संविधान में धर्म निरपेक्षता की इतनी सुदृढ़ व्यवस्था के बावजूद भी अपना देश कुछ एक कट्टर पंथियों के प्रभाव से अछूता नहीं रहा है। यद्यपि यहाँ की राजनीति में धर्म का बोलवाला सदैव से रहा है, किन्तु वह धर्म, मानव धर्म कहा जाता रहा है, जिससे कि अंग्रेजों के शासनकाल में अलग–अलग धर्मों में विश्वास रखने वाले हिन्दुओं और मुसलमानों में अलग–अलग कर दिया, जिससे हिन्दु और मुसलमान मिलकर न रह सकें, आगे चलकर भारत देश का बंटवारा भी इसी धर्म को लेकर किया गया। स्वतंत्र भारत में अनेक जाति धर्म व सम्प्रदाय के रखने वाले पाये जाते हैं। इन सभी से कभी भी धर्म के नाम पर दंगे हो जाते हैं, जिनके कारण साम्प्रदायिक सद्भावना आहत होकर मानव मात्र को पुनर्विचार के लिये विवश करती है।

भारत के संविधान की प्रस्तावना में भारत को एक धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित किया गया है। भारतीय संविधान में धर्म अथवा जाति का भेद–भाव किये बिना प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार प्रदान किये हैं। भारत में राज्य का कोई धर्म नहीं है और इसलिए वह धर्मतान्त्रात्मक राज्य से भिन्न है।

धर्मनिरपेक्षता के दो रूप हो सकते हैं–एक राज्य धर्म विरोधी हो, उनकी अपनी एक विचारधारा हो तथा वह उसी पर आचरण करें। दूसरा, राज्य धर्मों की ओर उदासीन हों, किसी धर्म को संरक्षण न दें किसी से द्वेष न करें, नागरिकों को अपनी रूचि का धर्म मानने की स्वतन्त्रता दें और आवश्यकता पड़ने पर यदि राज्य कार्य या जनहित के कार्य में किसी धर्म की किसी बात को बाधक पाता है तो उसे अपने लिए अमान्य घोषित कर सके।

धर्म निरपेक्ष राज्य का अर्थ एक ऐसे राज्य से है जो धर्म से पृथक तथा असम्बद्ध हो और धर्म के प्रति निष्ठावान न हो। दूसरे शब्दों में, ऐसे राज्य में धर्म और राज्य के बीच पृथक्करण होता है, लेकिन धर्म निरपेक्ष राज्य का अर्थ धर्म विरोधी, रहित अथवा अनीश्वरवादी नहीं है। इसका अर्थ

है राजनीतिक मामलों में धर्म के प्रभाव से मुक्त होना, राज्य का धार्मिक क्षेत्र में तटस्थ होना और किसी धर्म विशेष के साथ कोई पक्षपात न करना। धर्मनिरपेक्ष राज्य ऐसा राज्य होता है जो व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से धार्मिक स्वतन्त्रता की गारन्टी देता है। संवैधानिक रूप से किसी धर्म विशेष से न तो सम्बन्धित है और न ही वह किसी धर्म को बढ़ावा देता अथवा उसमें हस्तक्षेप करता है।

भारत में पाकिस्तान के निर्माण के उपरान्त भी लगभग ग्यारह करोड़ मुसलमान रह गये थे इसके अतिरिक्त सिख, पारसी, जैन, बौद्ध आदि अल्पसंख्यक धर्मावलम्बी है। इस प्रकार भारत में धार्मिक अल्पसंख्यकों के हित में धर्मनिरपेक्षता का आदर्श ही सबसे बड़ा कारगर संरक्षण है। अतः भारत में धर्मनिरपेक्षता राज्य की नींव डाली गयी। भारत में अनेक सम्प्रदाय और मत मतान्तर है, इसलिए भारत में राज्य द्वारा किसी विशेष धर्म को मान्यता देना अच्छा नहीं समझा गया।

भारत के गणतन्त्रीय संविधान में स्वतन्त्रता आन्दोलन के आदर्शों और बहुत से देशों की अच्छी बातों को शामिल किया गया है। इसमें सभी तरह के अल्पसंख्यकों–धार्मिक, भाषायी और सांस्कृतिक आदि की अनेक तरह से रक्षा की व्यवस्था की गयी है। संविधान के अनुच्छेद 25 के अनुसार अन्तःकरण की स्वतन्त्रता तथा किसी भी धर्म को मानने, उस पर आचरण करने और धार्मिक प्रचार करने की गारन्टी दी गयी है। अनुच्छेद 26 में धार्मिक मामलों का प्रबन्ध बिना किसी प्रकार के हस्तक्षेप के साथ करने की गारन्टी दी गयी है। अनुच्छेद 27 में किसी विशेष धर्म की उन्नति, प्रचार–प्रसार के लिए करों की वसूली पर प्रतिबन्ध लगाया गया है और अनुच्छेद 28 में सरकारी धन से चलने वाली शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा न देने की गारण्टी दी गयी है और धार्मिक उपासना में उपस्थित न होने की छूट दी गयी है। संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकारों के अन्तर्गत अनुच्छेद 29 में अल्पसंख्यकों के हितों को संरक्षण दिया गया है और अनुच्छेद 30 में अल्पसंख्यकों को अपने पसन्द की शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अधिकार दिया गया है।

भारतीय संविधान के धार्मिक स्वतन्त्रता सम्बन्धी ये उपकरण धर्मनिरपेक्ष अथवा असाम्प्रादिकता राज्य की आधारशिला है। भारत जैसे देश में जहॉं अनेक धर्म के जन्मे लोग आज भी फल–फूल रहे हैं, धर्मनिरपेक्षता का सिद्धान्त विशेष महत्व रखता है। भारत में सरकार इस बात के लिए वचनबद्ध है कि वह अल्पसंख्यकों के प्रति चाहे वे धार्मिक, सांस्कृतिक या भाषाई कोई भी क्यों न हों, किसी किस्म का भेदभाव नहीं होने देगी। यह अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के लिए संविधान में की गयी व्यवस्थाओं को और उनकी भलाई की सरकारी नीतियों और प्रशासकीय कार्यक्रमों को भी कारगर ढंग से लागू करने के लिए कृत संकल्प है।

भारत में सभी संस्कृतियों के मानने वाले सम्मान और इज्जत के साथ आज भी रहते हैं, उन्हें न केवल कानून द्वारा समान अधिकार और संरक्षण की गारण्टी प्राप्त है, बल्कि वे देश के महत्वपूर्ण सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन में सक्रिय और प्रमुखता से भाग ले रहे हैं। इस बात को कोई भूल नहीं सकता कि अबुल कलाम आजद और रफी अहमद किदवई भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रमुख सेनापतियों में थे। इसी प्रकार भारतीय संविधान को उसका रूप प्रदान करने में डा० बी०आर० अम्बेडकर की प्रमुख भूमिका को भी भुलाया नहीं जा सकता। भारतीय जीवन और इतिहास में सिक्खों, ईसाइयों और बौद्धों ने भी इसी प्रकार प्रमुख भूमिका निभायी है। दो प्रमुख मुस्लिम नेताओं, स्व० डा० जाकिर हुसैन और स्व० फखरूद्दीन अली अहमद ने राष्ट्रपति के सर्वोच्च पद को सुशोभित किया। यह राष्ट्र द्वारा भी नागरिक को दिया जाने वाला सबसे बड़ा सम्मान था। बहुत से राज्यों में मुसलमान, सिक्ख और ईसाई राज्यपाल मुख्यमंत्री और दूसरे ऊँचे पदों पर रहे हैं।

किसी भी देश की व्यवस्था में रक्षा विभाग सबसे महत्वपूर्ण विभाग माना जाता है। भारत की सशस्त्र सेनाओं के संगठन से इस तथ्य की पूरी तरह से पुष्टि होती है कि अल्पसंख्यकों को विकास पूरे अवसर दिये गये हैं। हमारे एकमात्र फील्ड मार्शल एस०एच०एफ०जे० मानेकशा पारसी थे, एयर चीफ मार्शल इदरिस हसन लतीफ, जो कि एक मुसलमान हैं, हमारी वायु सेना के अध्यक्ष रहे। उनसे पहले एक पारसी, एयर मार्शल ए०एम० इंजीनियर और एक सिक्ख एयर चीफ मार्शल अर्जुन सिंह वायु सेना अध्यक्ष रह चुके थे। हमारे नौ सेना अध्यक्ष एडमिरल आर०एल० परेरा ईसाई थे, जबकि उनसे पहले एडमिरल जाल कर्सेटजी पारसी थे। सेना में वीरता के लिए पुरस्कार प्राप्त करने के लिए शूर वीरों में मुसलमान, सिक्ख और ईसाई सभी धर्मों के लोग होते हैं।

अपितु भारत में सभी धर्मों और सांस्कृतियों के मानने वालों को संवैधानिक रूप से समान अधिकार और सम्मान प्राप्त है। किन्तु फिर भी व्यवहारिक रूप में धर्म निरपेक्षता का असर कम हो जाता है और साम्प्रदायिकता का रंग दिखलायी पड़ता है। इसके निम्नलिखित कारण है–

मुसलमानों में पृथक्करण की भावना–ऐसा माना जाता है कि मुसलमानों में पृथक्करण की भावना आज भी विद्यमान है, और वे अपने को राष्ट्रीय धारा में समावेश नहीं कर पाये। अनेक मुस्लिम नेताओं ने स्वाधीनता के बाद इस बात पर प्रचार किया कि उन्हें मुख्य राष्ट्रीय प्रवाह में शामिल होने के लिए ऐसे राजनीतिक दलों को सहयोग देना चाहिए जिनका विश्वास धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद तथा आर्थिक न्याय में हैं परन्तु इन विचारों का कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा और अनेक मुस्लिम नेताओं और संगठनों ने इस बात का प्रचार किया कि मुस्लिम सम्प्रदाय के हितों की सुरक्षा के लिए उन्हें पृथक रूप से भाग लेना चाहिए। 'जमायत–ए–इस्लाम' ने मुसलमानों को सलाह दी कि पहले आम चुनावों में भाग लेना चाहिए। ऐसे ही एक दूसरे संगठन 'तीयत–उल–उलेमा–ए हिन्द' ने भी मुसलमानों को राष्ट्रीय राजनीति से पृथक रहने की सलाह दी। 1948 में मुस्लिम लीग ने पृथक निर्वाचन की मांग की। 1961 में 'अखिल भारतीय मुस्लिम लीग' की स्थापना की गयी और यह प्रचार किया गया कि भारत में मुस्लिम लीग ही मुस्लिम हितों का संरक्षण कर सकती है। सन् 1971 के मध्यावधि चुनावों के समय नई दिल्ली में देश के अधिकांश भागों में मुस्लिम प्रतिनिधियों ने अखिल भारतीय राजनीतिक

सम्मेलन आयोजित किया। इसके पीछे जमाएत–ए–इस्लाम का हाथ था। इस प्रकार अनेक धर्मान्ध मुस्लिम संगठनों ने सम्प्रदायवाद का स्वतन्त्रता के बाद भी कभी उन्मूलन नहीं होने दिया।

संकुचित हिन्दू राष्ट्रवाद–भारत के हिन्दू सम्प्रदाय के भी ऐसे लोग तथा गुट हैं जो धर्मान्धता की संकीर्ण भावनाओं से ओत–प्रोत हैं। हिन्दू महासभा तथा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ जैसे संगठनों ने राष्ट्रवादी भावनाओं के साथ–साथ हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को बराबर उत्तेजित किया है। ये लोग यहाँ तक कहते हैं कि भारत हिन्दुओं का देश है और हिन्दू धर्म के अनुयायिओं को ही इस देश में निवास करने का अधिकार है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ मुसलमानों का कट्टर विरोधी रहा है। इसके समर्थकों का मत है कि भारतीय राष्ट्रीय का आधार 'हिन्दुत्व' ही हो सकता है। यद्यपि वास्तव में ऐसा नहीं है किन्तु कुछ स्वार्थी तत्वों ने एक निहित स्वार्थवश इस भावना को भड़काया है, और अपना स्वार्थ सिद्ध किया।

सरकार की उदासीनता–सरकार और प्रशासन की उदासीनता के कारण भी कभी–कभी साम्प्रदायिक दंगे हो जाते हैं। सामान्य सी घटना प्रशासन की असावधानी के कारण कई बार साम्प्रदायिक दंगों का रूप ले लेती है। स्वतन्त्रता के बाद हुए साम्प्रदायिक उपद्रवों के अध्ययन से ऐसा पता चलता है कि उनमें वृद्धि हो रही है। किन्तु इस विषय में स्थिति विभिन्न क्षेत्रों एवं नगरों में भिन्न–भिन्न है। रत्ना नायडू के अनुसार, ऐसे नगर जिनमें बड़े साम्प्रदायिक उपद्रव हुए हैं दो प्रकार के हैं। इनमें एक प्रकार के नगर वे हैं जो औद्योगिक नगर हैं, और दूसरे प्रकार के वे जो दस्तकारी एवं उद्योगों के नगर हैं और जो उद्योग एवं व्यापार के आधुनिक केन्द्रों के रूप में विकसित होने का प्रयत्न कर रहे हैं। प्रथम वर्ग के उदाहरण जमशेदपुर, राउरकेला, आदि हैं और दूसरे वर्ग के उदाहरण मुरादाबाद, अलीगढ़, अहमदाबाद, बनारस आदि हैं।

साम्प्रदायिकता के बारे में गृह मन्त्रालय की गोपनीय रिपोर्ट में टिप्पणी है कि थोड़े–थोड़े समय बाद भड़क उठने वाली साम्प्रदायिक हिंसा से गहन चिन्ता व्यक्त की गयी है, जिसके फलस्वरूप जनता के मन में कानून एवं व्यवस्था के प्रति चिन्ता का मुख्य कारण विभाजक, विभेदक और अन्य आन्दोलनों को दिया जाने वाला अनुचित प्रचार (समाचार एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया द्वारा) है। कतिपय राजनीति दल और गुट किसी भी उपलब्ध बहाने की आड़ लेकर इन आन्दोलनों को खड़ा कर देते हैं इस प्रकार वास्तविक अपराधी तो राजनीतिक दल हैं। साम्प्रदायिक दंगों सम्बन्धी अनेकों जाँच आयोगों की रिपोर्टों का विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि उन सभी में किसी न किसी रूप से राजनीतिक दलों की आलोचना की गयी है। विभिन्न जाँच एजेन्सियों का मत है कि राजनीतिक दलों को किसी समुदाय की धार्मिक भावनाओं के नाम पर अपील करके वोट प्राप्त करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। धर्म निरपेक्ष लोकतान्त्रिक पार्टियो में भी सामान्य सदस्यों में साम्प्रदायिकता का प्रवेश हो गया है। यह एक अहितकर प्रवृत्ति है, जिसे सम्बद्ध दलों को रोकना चाहिए। जमशेदपुर में 1979 में हुए दंगों में की जाँच के लिए गठित आयोग ने कहा था कि ''वे (राजनीतिक दल) सम्प्रदायों को सदैव ही 'वोट बैंक' समझते हैं और तदनुरूप ही अपने कार्यक्रम और कार्यवाही सम्बन्धी योजना बनाते हैं। वोट का अर्थ है सत्ता, और राजनीतिज्ञों को अन्य किसी भी बात की तुलना में सत्ता कहीं अधिक प्यारी है।''

साम्प्रदायिक घटनाओं के पीछे 'विदेशी हाथ' होने का आरोप भी आजकल जोर–शोर से सुनाई पड़ रहा है। तमिलनाडू में हरिजनों का धर्म परिवर्तन करके उन्हें मुसलमान बनाया गया तो केन्द्रीय सरकार ने यह ऑकलन प्रस्तुत किया था– 'इस बात के पर्याप्त संकेत है कि इस क्षेत्र में हरिजनों का धर्म परिवर्तन करे लिए जमायते–इस्लामी हिन्द और अन्य कट्टरपंथी गुट जिस उत्साह से कार्यरत हैं, उसका एक कारण आंशिक तौर पर ही क्यों न हो, यह भी मुस्लिम देशों और अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी संगठनों की ओर से पिछले दो–तीन वर्षों से धनराशि प्राप्त होना है। इस क्षेत्र के समृद्ध और सम्पन्न मुसलमानों ने, जिनके खाड़ी के देशों और दक्षिण–पूर्व में स्थित मुस्लिम देशों के साथ गहन व्यवसायिक सम्पर्क और सम्बन्ध है, मुस्लिम संगठनों के प्रयासों को बढ़ावा दिया है। ये आरोप गम्भीर है और जब तक सरकार इस बारे में कुछ निश्चित प्रमाण नहीं देती तब इस विषय पर कुछ भी कहना देश हित में नहीं है।

अब जब हिन्दू–मुस्लिम दंगों की संख्या में वृद्धि हुई है–1982 में 427 दंगे हुए, जबकि 1981 में 319 हुए थे; केन्द्रीय सरकार की राय में अल्पसंख्यक समुदाय में कट्टरपंथी नेतृत्व का उभार और परम्परावादी मुस्लिम गुटों को अरब देशों से भारी मात्रा में धनराशि प्राप्त होना और मुस्लिम जगत में अन्य अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी एकता प्रभाव, इसका कारण है। दोनों ही सम्प्रदायों की गहन धार्मिक भावनाओं का दुरूपयोग किया जा रहा है, यह दर्शाने के लिए एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय को नष्ट करने पर उतारू है, उनके रीति–रिवाज और व्यवहारों में अन्तर को उछाला जा रहा है। अतएव ऐसे मामलों का भी कोई स्थायी समाधान नहीं खोजा जा सकता, जिन्हें सुनकर भी अधिकांश अन्य देशों में लोग हंस ही सकते हैं। जैसे कि मस्जिदों के सामने संगीत या हिन्दुओं द्वारा पावन मानी जाने वाली गौ का वध अथवा हिन्दू धार्मिक समारोहों के अवसर पर मुसलमानों पर गुलाल अथवा रंग डाले जाने आदि के मामले हैं।

किसी भी सभ्य समाज में ऐसे मामलों को स्थानीय समुदाय खुद ही आपस में विचार–विमर्श करके निपटा लेते हैं और वे एकता के बारमें आवश्यकता होने पर ही समुदाय में प्रचलित रीति–रिवाजों को ध्यान में रखकर रियायतें बरतते हैं। ऐसा नहीं है कि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दोनों ही सम्प्रदायों के समझदार लोगों ने कभी कोशिश ही नहीं की है। किन्तु दोनों ही सम्प्रदायों के निहित स्वार्थी तत्वों के सतत् प्रचार ने एक ऐसा वातावरण बना दिया है, जिससे समस्या का हल खोजा जाना असम्भव सा ही प्रतीत होता है। पराजित राजनीतिज्ञ और पार्टियॉ विशेष रूप से दोषी हैं। इस प्रकार भय, अविश्वास, और दोनों समुदायों के बीच एक–दूसरे के प्रति सन्देह की भावना ही साम्प्रदायिक वैमनस्य का मुख्य कारण है। और जब सरकार समस्या के मूल कारणों की चर्चा करने के बजाय 'विदेशी धन' और

'विदेशी धन' की चर्चा करके ही सन्तुष्ट हो जाती हो तो समस्या का भयावह रूप धारण कर लेना स्वाभाविक ही है।

भारतीय नेताओं का विचार था कि यदि भारत का विभाजन कर पाकिस्तान नामक एक मुस्लिम राष्ट्र बना दिया जाय तो साम्प्रदायिकता का अन्त हो जायेगा और इसी उद्देश्य को सामने रखकर भारत–पाकिस्तान का विभाजन भी हुआ। लेकिन बड़े दुःख की बात है कि एक अलग मुस्लिम देश बनाने के बावजूद देश में साम्प्रदायिक भावना का अन्त नहीं हुआ। आज भी भारत में साम्प्रदायिक दंगे यत्र–तत्र होते रहते हैं और लोगों में साम्प्रदायिकता सम्बन्धी भावनायें व्यापक रूप से व्याप्त हैं।

साम्प्रदायिकता राजनीति में किस ओर कितने भयंकर खतरे की ओर ले जाती है। जिससे हम गुजर चुके हैं और कितने भयंकर परिणाम हम देख चुके हैं। हमको अपने और देश के मस्तिष्क में यह बात साफ–साफ रखनी चाहिए कि साम्प्रदायिकता के रूप में धर्म और राजनीति का गठबन्धन बड़ा खतरनाक होता है और इससे असामान्य प्रकृति के अवांछनीय विचार उत्पन्न होते हैं। सन् 1947 से लेकर आज तक भारत में 21 हजार से ज्यादा साम्प्रदायिक दंगे हो चुके हैं और हमारे अनेक महापुरूष–महात्मा गांधी तथा श्रीमती इन्दिरा गांधी, श्री राजीव गांधी सहित अनेक इनकी भेंट चढ़ चुके हैं। इन दंगों ने देश के जन–धन की अपार क्षति की है, परन्तु हम कुछ भी सबक लेने से परहेज करते हैं, हम उन चन्द सिर–फिरे व्यक्तियों के हाथों में खेलने लग जाते हैं जो धर्म के नाम राष्ट्रीय हित के साथ होली खेलते हैं, जिन्हें न सम्प्रदाय के हित से सरोकार है और न राष्ट्र के प्रति कोई प्रेम है।

किसी भी सम्प्रदाय की धार्मिक विचारधारा उस सम्प्रदाय विशेष और सम्बन्धित राष्ट्र की एकता, सुरक्षा और प्रगति का प्रतीक होता है। उसमें हिंसा, अत्याचार, दुराचार, पापाचार, आदि विनाशकारी एवं भविष्य के लिए बहुत बड़े खतरे की घन्टी है, विघटनकारी तत्वों के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। हमारा यह दुर्भाग्य है कि व्यक्तिगत राजनीतिक स्वार्थों ने वर्ग संघर्ष को साम्प्रदायिकता का जामा पहना दिया है, पूर्व में जो हमारे शासकों ने बॉटों और राज करो की कूटनीति की दृष्टि में रखकर हिन्दू और मुसलमानों के मध्य विषमता के बीज बोने की जो विघटनकारी नीति अपनायी थी, उसी नीति का अनुगमन हमारे राजनीतिक दल कर रहे हैं।

लेकिन इतना सब होते हुए भी आज भी देश को साम्प्रदायिकता–विहीन नहीं बनाया जा सका। आज तो इसका रूप पूर्वापेक्षा और भी प्रचण्ड है। आज मुस्लिम लीग तथा हिन्दू महासभा आदि साम्प्रदायिकता दल और भी उग्र रूप में पनपे हैं। इनसे देश को हर समय खतरा बना हुआ है। आवश्यकता इस बात की है कि इन दलों पर अविलम्ब प्रतिबन्ध लगा दिया जाये। पंडित नेहरू के शब्दों में ''यदि हम पार्थक्यवाद तथा गुटवाद की भावना से मुक्त हो जाये तो तेजी से आगे बढ़ सकते हैं।''

भारतीय राजनीति में साम्प्रदायिकता का उत्तरदायित्व किस पर डाला जाये? यह दूसरा प्रश्न है, पर समस्या यह है कि साम्प्रदायिकता के कारण भारतीय जन कल्याण, राष्ट्रीय एकता और संगठन को आज कितना भयंकर खतरा पैदा हो गया है जिसका लाभ हमारे पड़ोस के दुश्मन तक उठाने की ताक में बैठे हैं। अपने उग्र रूप में यह साम्प्रदायिकता कितनी भयंकर हो सकती है, वह तो विभक्त भारत माँ अपने कटे अंगो सहित हमें अपनी मर्म व्यथा को मर्मान्तक मूक शब्दों में व्यक्त कर रही है। देश विभाजन की वह महान क्षति आज भी पूरी नहीं हो पायी है जबकि देश में हो रहे साम्प्रदायिक दंगों के दुष्परिणाम भारतीय राजनीति में निम्नवत् रहे हैं–

आपसी द्वेष–साम्प्रदायिकता से विभिन्न वर्गों में आपसी द्वेष को बढ़ावा मिलता है। केवल बढ़ावा ही नहीं, वरन् आपसी द्वेष का एक बहुत बड़ा कारण ही साम्प्रदायिकता है। जब हिन्दू और मुसलमान व ईसाई अपने–अपने हितों के लिए एक ही सरकार से लड़ते हैं तो आपस में द्वेष, वैमनस्य हो जाना स्वाभाविक ही है। यही द्वेष कभी भयंकर रूप धारण कर समाज में आतंक फैला देता है, यही द्वेष समाज की शान्ति भंग कर सकता है और यही द्वेष समाज के सदस्यों में मारकाट फैला देता है।

1. आर्थिक हानि–साम्प्रदायिक दंगों में आर्थिक हानि भी होती है। न जाने कितनी दुकानों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों और घरों को लूट लिया जाता है और उनमें आग लगा दी जाती है। सरकारी बसों, ट्रेनों, सरकारी इमारतों को आग के हवाले कर राष्ट्रीय सम्पत्ति नष्ट कर दी जाती है, और न जाने कितने लोगों के रोजगार के साधन समाप्त हो जाते हैं, जिससे उन्हें अपनी रोजी–रोटी के लाले पड़ जाते हैं। इतना ही नहीं साम्प्रदायिक दंगों पर काबू पाने के लिए न मालूम कितना धन व्यय करना पड़ता है जो कि विकास कार्यों में लगना चाहिए।
2. जन हानि–साम्प्रदायिकता के कारण प्राण हानि भी अत्याधिक होती है। शायद ही ऐसा साम्प्रदायिक दंगा हुआ हो जिससे कुछ व्यक्तियों की जानें न गयी हों। राँची, श्रीनगर, बनारस, अलीगढ़, मुम्बई, गोधरा, अहमदाबाद आदि के साम्प्रदायिक दंगों का उदाहरण सामने है। इन दंगों में अनेकों व्यक्तियों की जाने तो गयी ही साथ अनेकों व्यक्ति जीवन व मृत्यु का संघर्ष करने के लिए घायलावस्था में पड़े रहे।
3. राजनीतिक अस्थिरता–साम्प्रदायिकता का एक दुष्परिणाम राजनीतिक अस्थिरता भी है। साम्प्रदायिकता वह परिस्थितियाँ उत्पन्न कर देती है, या उन परिस्थितियों को उत्पन्न करने में सहायक होती है, जिससे कि देश में राजनीतिक अस्थिरता आ जाती है। राम जन्मभूमि–बाबरी मस्जिद विंध्यन्स प्रकरण में भाजपा शासित सभी प्रादेशिक सरकारों को केन्द्र द्वारा बर्खास्त कर दिया था। धर्म की राजनीतिक प्रवृत्ति के कारण आज भी राम जन्मभूमि–बाबरी मस्जिद विवाद का राजनीतिक दल अपने–अपने तरीके से भुना रहे हैं।
4. राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा–भारत एक बहु सम्प्रदायवादी देश है। इसमें अनेक अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक व्यक्ति निवास करते हैं और इन्हीं अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक के बीज जो साम्प्रदायिक झगड़े और तनाव पैदा होते हैं, उनमें भारत की

राष्ट्रीय सुरक्षा को गम्भीर खतरा पैदा हो सकता है। भारत में अनेक पृथकतावादी आन्दोलन कुछ देशी एवं कुछ विदेशी तत्वों द्वारा जलाये जा रहे हैं। कुछ स्वार्थी तत्व कश्मीर को भारत से अलग करने के लिए प्रयासरत हैं तो कुछ अन्य स्वार्थी लोग खालिस्तान राज्य की स्थापना की भी मांग कर चुके हैं।

हालाकि भारतीय संविधान निर्माताओं ने भारत में धर्म–निरपेक्ष राज्य स्थापित करने का पूर्ण प्रयास किया है, लेकिन व्यवहारिक रूप में धर्म–निरपेक्षता का रूप पूर्ण रूप से सफलता प्रदर्शित नहीं हो पायी है। धर्म के राजनीतीकरण ने विभिन्न राजनीतिक दलों ने विभिन्न सम्प्रदायों को छोटी–छोटी से मांगों को व्यापक रूप दे दिया। जिससे धर्म आधारित आन्दोलन खड़े हुए और देश को विखण्डित भी करना चाहा। सांप्रदायिक दंगे हुए जिससे जनहानि व धनहानि भी हुई, इन दुष्परिणामों के अतिरिक्त साम्प्रदायिकता से देश में आर्थिक उन्नति व औद्योगिक विकासें भी बाधा पड़ी है। अन्य राष्ट्रों से भारत के सम्बन्धों पर भी साम्प्रदायिकता से बुरा प्रभाव पड़ता है। भारत की अधिकांश जनता अशिक्षित व निर्धन है तथा कुपोषण व बेरोजगारी की समस्याओं से जूझ रही है। भारत की जनता की यह दशा भारत में लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना को आवश्यक बनाती है।

अतः निष्कर्ष के रूप में हम यह सकते है कि भारतीय लोकतंत्र को ये सभी तत्व खोखला कर देंगे क्योंकि भारतीय समाज जातिगत–भेदभाव, धर्मबंधन से इस कदर जकड़ा हुआ है कि ना केवल समाज के बीच खाई पैदा हो रही है बल्कि यह तत्व राष्ट्रीय एकता के मार्ग में भी बाधा पहुंचाने का कार्य कर रही है।

प्रसिद्ध समाजशास्त्री एम.एन. श्रीनिवास का मत है कि ''परंपरावादी जाति व्यवस्था ने प्रगतिशील और आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था को इस प्रकार प्रभावित किया है कि ये राजनीतिक संस्थायें अपने मूलरूप में कार्य करने में समर्थ नहीं है।''

वास्तव में धर्म एवं जातिवाद भारतीय लोकतंत्र में बाधक सिद्ध प्रतीत हो रही है। अतः आवश्यक है धर्म निरपेक्ष राज्य ही लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना को सफल बना सकती है। इसके लिए देश के बुद्धिजीवी और राजनैतिक नेता इस संदर्भ में ईमानदारी के साथ सोचे और इस समस्या एवं इससे उत्पन्न अन्य समस्याओं का समाधान करने हेतु गंभीरतापूर्वक प्रयास करें। वैसे भी लोकतंत्र व्यक्ति की इकाई को मानता है ना कि जाति या समूह को, जाति, धर्म, और समूह के आतंक से मुक्त रखना ही लोकतंत्र का आग्रह है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारत का संविधान : डॉ. जयनारायण पाण्डेय, 41वॉं संस्करण प्रकाशन–सेन्ट्रल लॉ एकेडमी, इलाहाबाद–2
2. विश्व के धर्म एवं कौमी एकता : ईश्वर चन्द्र राही, प्रथम संस्करण, 1994 प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली।
3. प्राचीन भारतीय शासन पद्वति : प्रो. अनंत सदा शिव अलतेकर, 2009 तृतीय संस्करण, विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी।
4. प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक, : डॉ. आर.के. पाण्डेय, द्वितीय संस्करण, प्रकाश बुक डिपो, बरेली।
5. मध्यकालीन भारतीय संस्कृति : डॉ. लईक अहमद 2011, शारदा पुस्तक, भवन, इलाहाबाद।
6. आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन : डॉ. वी.पी. शर्मा, 2002 संस्करण, लक्ष्मी नारायण आगरा।
7. आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन : डॉ. वी.एल. फड़िया, 1998 साहित्य भवन, पब्लिकेशन, आगरा।
8. भारतीय शासन और राजनीति : डॉ. सुरेश सिंहल, द्वितीय संस्करण 2005 लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
9. भारतीय शासन और राजनीति : डॉ. सुरेश चन्द्र सिंघल, द्वितीय संस्करण, 2004 नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया नई दिल्ली।
10. राजनीतिक सिद्धान्त : डॉ. पुखराज जैन, द्वितीय संस्करण 2005, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
11. आधुनिक सरकारें सिद्धान्त और व्यवहार : डॉ. पुखराज जैन, संस्करण 36, 2009 साहित्य भवन, पब्लिकेशन, आगरा।
12. भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का विकास : बी.एन. लूनिया, द्वितीय संस्करण, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
13. वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास : पी.एन. झोक, 2003, हिन्दी साहित्य सदन, नई दिल्ली।
14. प्रमुख राजनीतिक : ज्योति प्रसाद सूद, 1989–90 के.

IJMRC

	विचारक		नाथ एण्ड कम्पनी मेरठ
15.	राजनीति में गिरावट	:	काका हाथरसी 1997 संस्करण, हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर।
16.	लोकतन्त्र के पाये	:	मनोहरपुरी, 2009, प्रतिभा प्रतिष्ठान, दिल्ली।
17.	प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास	:	डा. आर.एन. पाण्डेय, 2008 संस्करण, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
18.	भारतीय शासन और राजनीति	:	डा. सुरेश चन्द्र निहाल, द्वितीय संस्करण, 2005 लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
19.	हमारा संविधान	:	डा. सुभाष कश्यप, द्वितीय संस्करण, 2004 नेशनल, बुक ट्रस्ट इंडिया नई दिल्ली।
20.	राजनैतिक सिद्धान्त	:	डा. पुखराज जैन, द्वितीय संस्करण, 2005 लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
21.	आधुनिक सरकारें सिद्धांत और व्यवहार	:	डॉ. पुखराज जैन, संस्करण 36, 20–9 साहित्य भवन, पब्लिकेशन, आगरा।
22.	लोक प्रशासन	:	डॉ. बी.एल. फड़िया, 2007 साहित्य भवन, पब्लिकेशन्स, आगरा।
23.	प्राचीन भारतीय शासन और विधि	:	शिव स्वरूप सहाय, 2005 प्रथम संस्करण, नरेन्द्र प्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसी दास बंगला रोड, दिल्ली।
24.	कल्याण पत्रिका	:	धर्मशास्त्रांक गीता प्रेस, 22500 संस्करण, गोरखपुर।

IJOMRC